Poonam Shodh Rachna (ISSN 2456-5563)
(A Multidisciplinary, Peer Reviewed And Refereed Journal)
Vol.3, Issue.VIII, August 2024, Pc : PSR-2408001
http://doi.org/10.56642/psr.v03i08.001

“प्राण तत्व का स्वरुप एवं मानव जीवन में महत्व : शास्त्रोक्त अध्ययन”

गौरव वोहरा[1], शोधार्थी, योग विभाग , निर्वाण विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान
डॉ. विकेश कामरा[2], सहा. प्रोफेसर, योग विभाग, निर्वाण विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान

सारांशिका : *इस संसार के सभी जीवधारी के जीवन का आधार प्राण तत्व होता है। प्राण तत्व को धारण करने के कारण ही संसार के सभी जीवों को प्राणधारी की संज्ञा दी जाती है। मनुष्य के शरीर में इस प्राण तत्व का होना ही जीवन और शरीर का प्राणविहीन हो जाना ही मृत्यु का द्योतक होता है। शास्त्रों में इस जीवनप्रदायी प्राण तत्व को प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान नामक पांच भागों में विभाजित किया है। यह प्राण तत्व इन पांच रूपों में शरीर में रहकर विभिन्न शारीरिक-मानसिक क्रियाओं को संपादित करने का कार्य करता है। इस प्राण तत्व के उन्नत और प्रबल रहने पर शरीर ऊर्जावान, क्रियाशील और निरोगी बना रहता है जबकि इसके विपरीत प्राण तत्वों के क्षीण होने परशरीर ऊर्जहीन, निष्क्रिय और अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त होने लगता है। प्राण तत्व को उन्नत बनाने की क्रिया के रूप में योग शास्त्रों में प्राणायाम अथवा कुंभक के अभ्यास का उल्लेख किया गया है। प्राणायाम का अभ्यास करने से श्वसन क्रिया दीर्घ और गहरी होती है जिसके फलस्वरुप मनुष्य दीर्घायु बनता है। प्राणायाम करने से मन स्थिर एवं एकाग्र होता है जिससे मनुष्य अपनी सभी शारीरिक-मानसिक क्षमताओं एवं योग्यताओं का सही प्रकार उपयोग करने में सक्षम होता है, इसके साथ-साथ प्राणायाम के अभ्यास से मुनष्य में ज्ञानरूपी सूर्य का उदय होता है जिससे प्रकाशित होकर मनुष्य सन्मार्ग का पथिक बनने की दिशा में अग्रसर होता है।*

कूट शब्द : प्राण तत्व, पंचप्राण, प्राणायाम, कुंभक, शरीर, मन, जीवन, वायु, आयु, दीर्घायु, निरोगी।

प्राण एक विश्वव्यपिनी जीवन शक्ति है, जिसे ईश्वर ने सृष्टि के आदि में उत्पन्न किया। यह शक्ति सब जड़ चेतन पदार्थों का नियमन करती है। प्राण शब्द की उत्पत्ति प्राण धातु से धञ प्रत्यय करने पर और ‘प्र’ उपसर्ग पूर्वक ‘अन्न’ प्रत्यय करने पर होती है, जिसका अर्थ है - बल, जीवन शक्ति अथवा श्वास होता है। यह वायु से भी सूक्ष्म तत्व है। वायु की उत्पत्ति प्राण से ही होती है। वेद में प्राण को ‘मातरिश्वा’ कहा गया है। मातरिश्वा को आकाश में सर्वत्र व्याप्त सूत्रात्मा नामक सूक्ष्म वायु को कहा गया है तथा वातः को स्थूल वायु कहा गया है। प्राण तत्व एक सूक्ष्म तत्व है जो हमें स्थूल रूप से दृष्टिगत नहीं होता है किन्तु इस तत्व की अनुभूति हमें स्पर्श के माध्यमसे होती है।

इस पृथ्वी पर प्राण तत्व वायु के रूप में सर्वत्र विद्यमान है। जब तक प्राण शरीर में रहता है तब तक व्यक्ति जीवित और इसके निकल जाने पर मृत समझा जाता है। सभी पदार्थ प्राण शक्ति के वाहक होने से यही कहा जा सकता है कि प्राण वह जीवनीय शक्ति या ऊर्जा है जो समष्टि प्राण के विभिन्न माध्यमों के द्वारा व्याष्टि (प्राणियों के शरीर) में संचित कर सभी क्रियाओं का संचालन करती है अर्थात प्राण तत्व इस ब्रह्माण्ड और पिण्ड दोनों में ही शक्ति संचार कर रहा है। वस्तुतः श्वास और प्रश्वास की गति का ही दूसरा नाम प्राण है। यह प्राण शरीर के व्यापार को संयमित करने का कार्य करता है। इसीलिए इसका सोना अर्थात प्राण का नहीं लेना किसी ने आज तक नहीं देखा है और मनुष्य के सोने पर भी प्राण तत्व निरंतर जागता ही रहता है। इस प्राण तत्व के क्रियाशील रहने पर शरीर की सभी क्रियाएं सुचारू रूप में होती रहती हैं

[1] शोधार्थी, निर्वाण विश्वविद्यालय,जयपुर,राजस्थान
[2]सहा. प्रोफेसर, योग विभाग, निर्वाण विश्वविद्यालय,जयपुर,राजस्थान

जबकि प्राण तत्व के निष्क्रिय होने पर शरीर के अंग-प्रत्यंग क्रियाहीन हो जाते हैं। अथर्ववेद में प्राण को जीवन दाता, व्यापक, भूत भविष्यत् तथा सृष्टि का आधार कहा गया है। प्राण तत्वों के महत्व को जानते हुए अथर्ववेद में उपदेश किया गया है कि उस प्राण को नमस्कार है जिसके वश में यह संसार है, जो सब प्राणियों का ईश्वर है जिसमें सारा संसार प्रतिष्ठित है।[3]

मानव शरीर की सभी क्रियाओं को संचालित करने वाला आत्मा अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश और आनंदमय कोश, नामक पाँच आवरणों में आवेष्ठित है। इन सबके ऊपर अन्नमय कोश का आवरण चढ़ा हुआ है। जिससे प्राण की उत्पत्ति होती है इसलिए दूसरे प्राणमय कोश में पाँच कर्मेन्द्रियों और पाँच प्राणों का समावेश है। प्राण और इन्द्रियों का विकार रूपी यह प्राणमय कोश आत्मा को गति प्रदान करता है। जैसे विद्युत या दूसरी ऊर्जा के बिना अच्छे से अच्छा यन्त्र भी गतिशील नहीं होता है उसी प्रकार प्राण के बिना शेष चारों कोश निष्क्रिय बने रहते हैं। वायु, जल तथा अन्न के सात्विक अंश से निर्मित यह प्राणमय कोश का सूक्ष्म आवरण है। अपने प्रभाव से पंचावरणों से आच्छादित आनंदमय कोश में स्थित आत्मा को कर्ता, भोक्ता, दाता, वक्ता तथा क्षुधा-पिपासा प्रदर्शित करना ही इस प्राण तत्व का कार्य है।

एक वैज्ञानिक तथ्य यह है कि श्वास-प्रश्वास के बन्द हो जाने पर भी जब तक प्राण मानव शरीर में रहता है तब तक उसे मृत नहीं कहा जाता है। यद्यपि हृदय में स्थित प्राण ही श्वास-प्रश्वास क्रिया का हेतु है अतः हृदय के क्रियाशील रहने श्वसन क्रिया पुनः से प्रारंभ हो जाती है। शास्त्रों में उपदेश किया गया है कि सूर्य मण्डल से निकले हुए प्राण के परमाणु तेजोमय होने से सभी जीवित प्राणियों में प्राण से शरीर तेजो रूप है। यह प्राण-विज्ञान अनेक उपनिषदों में वर्णित है। उपनिषद साहित्य के अनुसार हमारे शरीर के चारों ओर बारह अंगुल तक प्राणमय कोष का क्षेत्र है। त्रिशिखि नामक उपनिषद में ऋषि ने उपदेश किया गया है कि कि मनुष्य देह शरीर का माप (प्रमाण) अपनी अंगुलियों के द्वारा छियानवें अंगुल का होता है। इस शरीर से प्राण बारह अंगुल अधिक प्रमाण वाला है। शरीर में स्थित वायु को (प्राणायाम) द्वारा शरीर में समुद्भूत अग्नि से योग (प्रक्रिया) द्वारा न्यून एवं सम करके ब्रह्म ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।[4]

प्राण तत्व समस्त जीवधारियों के शरीर की वह जीवनी शक्ति है जिसके बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है, यह प्राण सम्पूर्ण चराचर जगत में व्याप्त है। मानव शरीर की समस्त स्थूल एवं सूक्ष्म क्रियाओं का आधार यह प्राण तत्व ही है। यह प्राण तत्व ही शरीर को हृष्ट पुष्ट, बलिष्ट एवं शक्तिशाली बनाता है। योग साधनों के अभ्यास से साधक को अध्यात्म की ऊंचाइयों तक पहुंचाने वाला भी यह प्राण तत्व ही है। शरीर में इस प्राण तत्व की अधिकता अथवा प्रबलता होने पर शरीर ऊर्जावान, स्वस्थ, हल्का एवं निरोगी होता है, जबकि इस प्राण तत्व की कमी अथवा न्यून होने पर शरीर में आलस्य, भारीपन, अतिनिद्रा आदि लक्षण प्रकट होते हैं। शरीर में इस प्राण तत्व की ओर अधिक न्यूनतम होने पर शरीर में नाना प्रकार के रोग होते हैं। योग के विभिन्न अभ्यास जैसे प्राणायाम, ध्यान, दिनचर्या और पथ्य आहार के द्वारा प्राण तत्व को प्रबल बनाकर रोग से मुक्ति प्राप्त की जाती है। मानव शरीर में प्राण तत्व के निम्न भेद (प्रकार) होते हैं-

A. प्राण

[3]प्राणामाहुर्मातरिश्वानं वातो ह प्राण उच्यते। प्राणे ह भूतं भव्यं च प्राणे सर्वंप्रतिष्ठितम्।। (अथर्ववेद 11/04/05)

[4]देहमान स्वांर्घैलिभिः षण्णवत्यर्घैलायतम्। प्राणः शरीरादधिको द्वादशार्घैलमानतः।। (त्रिशि0 उप0 54)

कंठ से हृदय का भाग प्राणवायु का स्थान होता है। शरीर के इस भाग मेंवायु का बाहर से अन्दर आवागमन को प्राण संज्ञा दी गई है। इस प्रकार वायु में उपस्थित प्राणवायु (ऑक्सीजन गैस) का फेफड़ों को प्राप्त होती है। प्राणवायु शरीर की सभी वायुओं में सबसे प्रमुख और सभी का मूल होती है।

B. अपान

नाभि से पादतल तक का स्थान अपान वायु का होता है। अन्दर से बाहर गमन को 'अपान' कहा जाता है। अपान वायु बड़ी आंत के द्वारा शरीर से अनुपयोगी मल पदार्थों को बाहर उत्सर्जित करते हुए शरीर शोधन का कार्य करती है। यह अधोगामी होती है जिसके द्वारा शरीर से मल-मूत्र और गर्भ आदि बाहर आते हैं।

C. समान

प्राण और अपान के मध्य स्थान में समान वायु विद्यमान होती है। अर्थात शरीर में हृदय से नाभि का स्थान (उदर भाग) समान वायु का होता है। मानव शरीर के उदर भाग में स्थित समान वायु भोजन के पाचन का महत्वपूर्ण कार्य करती है। समान वायु के प्रभाव से पाचन अंग जैसे यकृत, पेन्क्रियाज आदि क्रियाशील बने रहते हैं और पाचन क्रिया व्यवस्थित रहती है।

D. उदान

मानव शरीर में कंठ से शीर्ष प्रदेश तक का स्थान उदान वायु का होता है। अर्थात शरीर के शीर्ष भाग में जहां सभी ज्ञानेन्द्रियों के केंद्र होते हैं, वह महत्वपूर्ण स्थान उदान वायु का होता है। उदान वायु के प्रभाव से सभी ज्ञानेन्द्रियों की क्रियाशीलता बनी रहती है। इस प्रकार उदान वायु का कार्य ज्ञानेन्द्रियों को क्रियाशील बनाना होता है।

E. व्यान

शरीर की समस्त नाड़ियों में व्याप्त वायु को व्यान कहते हैं। व्यान वायु रक्त के रूप में सम्पूर्ण शरीर में परिभ्रमण करता है और शरीर की समस्त कोशिकाओं को पोषण प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है।

इनके अतिरिक्त पाँच सूक्ष्म रूप से रहने वाले उपप्राण क्रमश नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनंजय होते हैं। नाग का कार्य डकार एवं हिचकी, कूर्म का कार्य पलकें झपकाना, कृकल का कार्य जम्भाई व भूख-प्यास, देवदत्त का कार्य निन्द्रा-तन्द्रा, आलस्य और छींक आदि को लाना तथा धनंजय का कार्य शरीर के अवयवों को खीचें रखना होता है इसीलिए मृत्यु के उपरान्त शरीर के अवयव ढीले हो जाते हैं जिससे मृत्यु के उपरान्त धनंजय के अभाव में शरीर फूलने लगता है। हठयोग के ग्रंथों में प्राण तत्व को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हुए इस तत्व ग्रहण करने की क्रिया के रूप में कुंभक का उपदेश किया गया है। कुम्भक की मूल उत्पत्ति **'कुंभ'** शब्द से होती है। शास्त्रों में कुंभ का अर्थ मिट्टी के घड़े से लिया जाता है। हठयोग के आचार्य महृषि घेरण्ड मुनि ने मानव शरीर को मिट्टी का घड़ा कहा है।[5] पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश नामक पांच तत्वों से निर्मित मानव शरीर का मुख्य आधार पृथ्वी तत्व ही होता है। मनुष्य पृथ्वी से उत्पन्न होता है और अंत में पृथ्वी में ही विलीन हो जाता है। योग शास्त्र में मानव शरीर रूपी इस मिट्टी के घड़े में प्राण भरने की क्रिया को कुंभक कहा गया है। इस प्रकार कुंभक का अभिप्राय स्थूल मानव शरीर में सूक्ष्म प्राण तत्व को धारण करने की क्रिया से होता है। हठप्रदीपिका ग्रंथ में योगी स्वात्माराम अष्टकुम्भक पर प्रकाश डालते हुए उपदेश करते हैं -

[5]आमकुम्भ इवाम्भस्थो जीर्यमाणः सदा घटः । योगानलेन संदह्य घटशुद्धिं समाचरेत् ॥ (घेरण्ड संहिता 01/04)

सूर्यभेदनमुज्जायी सीत्कारी शीतली तथा ।
भस्त्रिका भ्रामरी मूर्च्छा प्लाविनीत्यष्ट कुम्भकाः ।।

(हठप्रदीपिका 02/44)

अर्थात सूर्यभेदन, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्च्छा और प्लाविनी ये आठ प्रकार के कुम्भक होते हैं ।[6] इन आठ प्रकार के कुम्भक का नियमित रूप से विधि पूर्वक अभ्यास करने पर मनुष्य के शरीर में प्राण तत्व प्रबल बनता है।

प्राण तत्व का मानव जीवन में महत्व

मानव जीवन में प्राण तत्व का महत्व सर्वविदित है। प्राण तत्व के रहने पर ही जीवन है और शरीर क्रियाशील रहता है जबकि शरीर में प्राण तत्वों का अभाव ही मृत्यु का द्योतक होता है। प्राण की लम्बाई को नियंत्रित करने के सम्बन्ध में शिव स्वरोदय में कहा गया है-"जिन योगियों के प्रश्वास की लम्बाई न्यूनतम होती है, वह अपने भीतर अपार ऊर्जा का भण्डार संग्रहित तो करते ही हैं; साथ ही अनेक धर्मार्थिक शक्तियाँ जिन्हें सिद्धि भी कहते है, के धनी होते हैं। उनमें अविश्वसनीय प्राणिक और मानसिक क्षमताऐं पायी जाती हैं।[7] मोह व लोभ से मुक्त होकर सभी योगों में विजयी होना है, तो प्राण योग का अभ्यास आवश्यक है।

प्राणायाम से तात्पर्य प्राणतत्व का विस्तार एवं उन्नत बनाने वाली क्रिया से होता है। किसी भी मनुष्य का जीवन श्वास पर निर्भर करता है। श्वासों की श्रृंखला को जीवन आयु कहा जाता है। मनुष्य 1 मिनट में लगभग औसतन 16-18 बार श्वास ग्रहण करता है। इस प्रकार मनुष्य में 24 घंटों में श्वासों की संख्या 21,600 होती है। इस पृथ्वी पर जिस प्राणी की प्रति मिनट श्वसन दर जितनी कम होती है वह प्राणी उतनी ही लंबी आयु को प्राप्त करता है उदाहरण के रूप में कछुआ 1 मिनट में केवल 4 बार श्वास लेता है इसलिए उसकी आयु 400 वर्ष तक हो जाती है। तथा खरगोश व कुत्ता प्रति मिनट बहुत तीव्रगति से श्वास ग्रहण करते हैं तथा छोड़ते हैं। इसीलिए उनकी आयु 8-12 वर्ष ही मानी जाती है। अतः अपने रेचक तथा पूरक की लम्बाई बढाना व एक स्वस्थ व दीर्घ आयु व्यतीत करना भी प्राणायाम का उद्देश्य है। श्वसन क्रिया को दीर्घ तथा लयबद्ध करने से मनुष्य के जीवन की गुणवत्ता और उसकी दीर्घ जीविता पर भी प्रभाव पड़ता है।

प्राण तत्व को प्रबल बनाने की क्रिया के रूप में प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर में अधिक मात्रा में शुद्ध प्राणवायु (O_2) का शरीर में प्रवेश होता है और विषाक्त तत्व अधिक मात्रा में शरीर से बाहर उत्सर्जित होते हैं। प्राणायाम का अभ्यास करने से फेफड़ों की कार्यक्षमता उन्नत बनती है और शरीर की कोशिकाओं का भलि-भांति विकास होता है। प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर में स्थित अनावश्यक चर्बी नष्ट होती है और अनावश्यक विकारों से मुक्ति प्राप्त होने के साथ ही शरीर का भार सन्तुलित होने लगता है और सुन्दर आकृति-संरचना प्राप्त होती है। प्राणायाम के अभ्यास से चयापचय दर-रक्तचाप सन्तुलित होता है और हृदय स्वस्थ व बलवान बनता है जिससे मनुष्य का शरीर और शारीरिक क्रियाओं पर बेहतर नियंत्रण प्राप्त होता है। प्राणायाम का अभ्यास मस्तिष्क पर बहुत सकारात्मक प्रभाव डालता है और मस्तिष्क की कार्यकुशलता उन्नत बनती है। इससे मनुष्य में त्रीव स्मरण शक्ति, निर्णयन क्षमता और नेतृत्व क्षमता आदि श्रेष्ठ गुण अधिक विकसित होने लगते है। प्राणायाम के महत्व पर प्रकाश डालते हुए महर्षि मनु उपदेश करते हैं-

[6]जी स्वामी दिगम्बर, झा डा. पिताम्बर, स्वात्माराम-कृत हठप्रदीपिका, पृष्ठ संख्या 54
[7]सरस्वती स्वामी सत्यानन्द,-स्वरयोग, पृष्ठ संख्या-69

दहयन्ते ध्मायमानानां धातुनामं हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यान्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात।।

(मनुस्मृति 06/71)

जैसे अग्नि में तपाने और गलाने से धातुओं के मल नष्ट हो जाते हैं। वैसे ही प्राणायाम से इन्द्रियों एवं मन के दोष दूर होते हैं वैसे ही प्राणों के निग्रह से मन आदि इन्द्रियों के दोष भस्मीभूत हो जाते हैं।[8] प्राणायाम का अभ्यास शरीर एवं मन को स्थिर करता है। प्राणायाम के अभ्यास से प्रोस्ट्रेट ग्लैण्ड एवं किड़नी निरोगी बनती है। नियमित प्राणायाम का अभ्यास वृक्कों को ऊर्जावान बनाए रखता है एवं मनुष्य का शरीर बहुमूत्र, अल्पमूत्रता, वृक्कों में सूजन-जलन आदि रोगों से मुक्त बना रहता है।[9]

प्राणायाम के अभ्यास से प्राण तत्व संतुलित होने पर मन की चंचलता दूर होती है और मन में स्थिरता एवं एकाग्रता उत्पन्न होती है और बिखरी हुई मानसिक ऊर्जा केन्द्रित होने लगती है। इसीलिए अनेक मानसिक विकारों में प्राणायाम का अभ्यास करने से शीघ्र लाभ प्राप्त होता है। प्राणायाम का अभ्यास करने से मानसिक ऊर्जा सन्तुलित बनती है जिससे समायोजन क्षमता उन्नत बनती है और अन्तःकरण पवित्र होने के साथ-साथ मानसिक विकारों से मुक्ति प्राप्त होती है। प्राणयाम को मन की स्थिरता का उपाय बतलाते हुए योगी स्वात्माराम उपदेश करते हैं-

चले वाते चलं चित्तं निश्चले निश्चलं भवेत्।
योगी स्थाणुत्वमाप्रोति ततो वायु निरोधयेत्।।

(हठप्रदीपिका 02/02)

वायु के चलायमान होने पर चित्त भी चंचल होता है और वायु के निश्चल हो जाने पर चित्त भी स्थिर हो जाता है और तब योगी को स्थिरता प्राप्त होती है। अतः प्राणायाम का अभ्यास करें।[10] प्राणायाम का अभ्यास करने से मन शांत एवं स्थिर बनता है इसके साथ-साथ प्राणायाम का अभ्यास करने से मनुष्य अपनी बिखरी हुई ऊर्जा को केंद्रित करने में सक्षम बनता है।

इसी प्रकार प्राण तत्व को सुदृढ़ बनाने में प्राणायाम के महत्व पर प्रकाश डालते हुए योग दर्शन के रचनाकार महर्षि पतंजलि उपदेश करते हैं-

ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्।।

(पातंजल योगसूत्र 02/52)

उस प्राणायाम के अभ्यास से प्रकाश का आवरण क्षीण हो जाता है। अर्थात दर्शन शास्त्र की मान्यता के अनुसार जैसे-जैसे मनुष्य प्राणायाम का अभ्यास करता है, वैसे ही वैसे उसके पूर्व संचित कर्म, संस्कार और अविद्या आदि क्लेश दुर्बल होते चले जाते हैं। ये कर्म, संस्कार और अविद्या आदि क्लेश ही ज्ञान का अवारण है। इस परदे के कारण ही मनुष्य का ज्ञान ढ़का रहता है और वह मनुष्य लोभ- मोह आदि में मोहित हुआ रहता है। जब यह परदा दुर्बल होते-होते सर्वथा क्षीण हो जाता है, तब साधक का ज्ञान सूर्य की भांति प्रकाशित हो जाता है। इसलिए साधक को प्राणायाम का अभ्यास अवश्य करना चाहिए।[11]

---

[8]कुमार प्रोफेसर सुरेंद्र, विशुद्ध मनुस्मृति, पृष्ठ संख्या 278
[9]प्रताप डॉ. मालिक राजेंद्र प्रताप, मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव, पृष्ठ संख्या 117
[10]जी स्वामी दिगम्बर, झा डा. पिताम्बर, स्वात्माराम-कृत हठप्रदीपिका, पृष्ठ संख्या 35
[11]गोयन्दका हरिकृष्णदास, योग दर्शन, पृष्ठ संख्या 76